12_devesh_varun:Layout 1 03-Oct-19 4:01 PM Page 217

एक सांसद का समाधानपरक ग्रामीण चिंतन

देवेश विजय

ग्रामीण भारत के अवरुद्ध विकास पर देश-विदेश में सैकड़ों रचनात्मक ग्रंथ लिखे गये हैं। भारतीय जनता पार्टी के प्रबुद्ध सांसद वरुण गाँधी की हाल में प्रकाशित विशद रचना *अ रूरल मेनिफ़ेस्टो : रिअलाइज़िंग इण्डियाज़ फ्यूचर थ्रू हर विलेजिज़* इसी शृंखला की एक रोचक कड़ी है।

सक्रिय राजनीति में रह कर कई जन-प्रतिनिधियों ने पुस्तकें लिखी हैं। पर उनके लेखन में आत्मकथाओं संस्मरणों तथा पत्र-संग्रहों की भरमार रही है। इसके विपरीत इस ग्रंथ में जनता के एक निर्वाचित प्रतिनिधि ने अपने व्यापक भ्रमण व ज़मीनी अनुभवों का मौजूदा शोध-साहित्य से मिलान करने के बाद ही गाँवों की समस्याओं और उनके निदानों पर सटीक विवेचना प्रस्तुत की है। निश्चय ही अकादमिक अनुभव के अभाव में किसी के लिए भी स्थापित शोध में कुछ नया जोड़ पाना सरल नहीं है। परंतु 845 पृष्ठों, 248 तालिकाओं व 225 रेखा-चित्रों तथा सैकड़ों संदर्भ-ग्रंथों के उल्लेख से समृद्ध 'मेनिफ़ेस्टो' इस पेशेवर बंधन को लाँघने में काफ़ी हद तक सफल रहा है। इस सफलता का एक और कारण इस ग्रंथ की समग्रता भी है जिसके तहत लेखक ने आज के बहुचर्चित कृषि संकट के साथ-साथ गाँव के ग़ैर-कृषि उद्यमों की समस्याओं पर भी समुचित ध्यान दिया है।

इन ख़ूबियों के बावजूद वरुण गाँधी का 'रूरल मेनिफ़ेस्टो' रिक्तताओं व विवादों से मुक्त नहीं

12_devesh_varun:Layout 1 03-Oct-19 4:01 PM Page 218
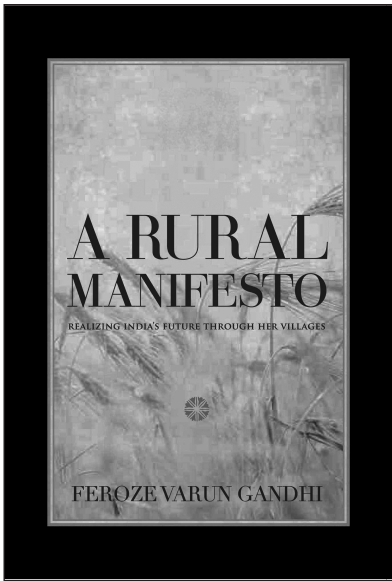
अ रूरल मेनिफ़ेस्टो : रिअलाइज़िंग इंडियाज़ फ्यूचर थ्रू हर विलेजिज़ (2018)
फ़ीरोज़ वरुण गाँधी
रूपा पब्लिकेशंस, नयी दिल्ली
मूल्य : 995 रु., पृष्ठ 825

है। पुस्तक की समालोचना से पहले लेखक की मूल प्रस्तावना तथा कथन पर नज़र डालना उचित होगा। ग्रंथ के 11 अध्यायों में वरुण ने क्रमश: कृषि की बढ़ती लागत, पानी की क़िल्लत, गाँव में ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोत, बाज़ार तथा मूल्यों की समस्याएँ, ग़ैर-कृषि आय के साधन, हथकरघा उद्योग, मज़दूरी का बदलता रूप, गाँव में शिक्षा तथा स्वास्थ्य सुविधाओं का हाल तथा उधारी व निष्कर्ष में 'आगे का रास्ता' जैसे विषयों का आँकड़ों एवं पूरे देश से अंतर्राज्यीय तुलनाओं के साथ विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया है। इन सभी व्याख्याओं में बुनियादी तर्क यही रहा है कि कोई सरकारी योजनाओं तथा ग़ैर-सरकारी प्रयोगों के बावजूद देश के छोटे किसान एवं ग्रामीण कारीगर आज तक जिन अभावों से ग्रसित हैं वे इन दीर्घकालिक प्रयासों के अपर्याप्त क्रियान्वयन से ही नहीं बल्कि इनकी कमज़ोर संकल्पना से भी उपजे हैं। इसी के उत्तर में प्रस्तुत ग्रंथ सैकड़ों साक्षात्कारों तथा उदाहरणों के साथ गाँवों की चुनौतियों पर अनेक विचारणीय समाधान सुझाता है। इन सब का उल्लेख यहाँ सम्भव नहीं, फिर भी यहाँ कुछ को दृष्टांत-स्वरूप समझना उचित होगा।

कुछ ठोस समाधान

गाँवों से जुड़ी आज की सबसे चर्चित समस्या किसानों की बदहाली की है जिसके चलते छोटे और सीमांत किसान कई प्रांतों में न केवल मज़दूर से बदतर स्थिति में नज़र आते हैं बल्कि हज़ारों की संख्या में हर वर्ष आत्महत्याएँ भी कर रहे हैं। ताज्जुब नहीं कि इस विषम परिस्थिति से निबटने के लिए देश में गहन शोध जारी है और समस्या के कारणों तथा समाधानों पर भी विश्लेषकों के बीच कुछ सहमति देखी जा सकती है। वैचारिक रुझानों के अनुसार समस्या के स्रोतों तथा निदान को निश्चय ही व्याख्याकारों ने अलग-अलग तरीक़े से सूचीबद्ध किया है, परंतु मुद्दे प्राय: एक जैसे रहे हैं। जहाँ कारणों में खेती की बढ़ती लागत, ज़मीनों की घटती उपज, गिरता जलस्तर, बढ़ते क़र्ज़ का बोझ तथा प्राकृतिक आपदाओं की मार सुपरिचित है, वहीं स्थिति से निबटने के लिए अधिकतम विद्वान सरकारों पर ऋण माफ़ी, पैदावार के लिए बेहतर समर्थन मूल्यों की व्यवस्था, लागत पर पर्याप्त इमदाद, आपदाओं के विरुद्ध बीमा और मुआवज़े की व्यवस्था एवं सड़कों का निर्माण, सस्ती बिजली तथा प्रशिक्षण केंद्रों के तीव्र विस्तार इत्यादि पर ज़ोर देते रहे हैं।

प्रस्तुत ग्रंथ की उपयोगिता इस आम सहमति से हट कर नये रचनात्मक सुझावों को सहज रूप से प्रस्तुत करने में ख़ास तौर पर झलकती है। इन ठोस सुझावों में प्रमुख हैं : फ़सलों के नुक़सान पर मुआवज़े के शीघ्र एवं न्यायोचित वितरण के लिए उपग्रह-मानचित्रण का उपयोग, जल-संरक्षण के लिए मनरेगा कार्यक्रम के माध्यम से बड़े स्तर पर तालाबों तथा बाँधों का विकास, किसानों को उपज का उचित मूल्य उपलब्ध कराने तथा आढ़तियों से बचाव के लिए मूल्य-निर्धारण के साथ-साथ शीत-भण्डारण का तेज़ी से विकास, सभी फ़सलों की सरकारी ख़रीद का देशव्यापी प्रबंध, पैदावार को बीमा का संरक्षण देने हेतु सरकारी व ग़ैर-सरकारी कम्पनियों की प्रविष्टि, छोटे किसानों को परवर्ती तकनीक का लाभ पहुँचाने के लिए प्रशिक्षण के अलग से बनाए जा रहे कौशल विकास केंद्रों के साथ साधारण

12_devesh_varun:Layout 1 03-Oct-19 4:01 PM Page 219

शिक्षा संस्थानों में भी उपयोग तथा कृषकों को महँगी मशीनों को किराये पर सरलता से उपलब्ध कराने हेतु विशेष तकनीकी केंद्रों का निर्माण। इसके अतिरिक्त लेखक ने कृषि के साथ ही गाँवों के ग़ैर-कृषि व्यवसायों के तीव्र विस्तार पर भी ध्यान दिया है। इनमें स्वास्थ्य सुविधाओं के विस्तार तथा स्वच्छता के बेहतर प्रबंधों के साथ संबंधित विषयों की वर्तमान पाठ्य-क्रमों में प्रविष्टि तथा रोज़गार हेतु कौशल विकास केंद्रों में उत्तीर्ण विद्यार्थियों के लिए उद्यम अथवा नौकरी हेतु आवश्यक मार्गदर्शन की व्यवस्था शामिल है।

रचनात्मक सुझावों की प्रचुरता के बावजूद वरुण गाँधी का 'रूरल मेनिफ़ेस्टो' कमियों व विवादों से परे नहीं है। विशेषकर प्रारम्भ में एक परिचयात्मक अध्याय का अभाव इस विशाल ग्रंथ के अनेक आयामों को सूत्रबद्ध करने तथा उठाए गये मुद्दों के अंतर्संबंधों को स्पष्ट करने में बाधा उत्पन्न करता है। हालाँकि लेखक ने अपनी विश्लेषण-विधि की संक्षिप्त व्याख्या पुस्तक के आलेख में दी है, परंतु यह शोधाधारित विवरण असल में स्वयं की विधि व अवधारणाओं की विस्तृत समीक्षा भी माँगता है तथा लेखक के आकलन की अन्य विचारधाराओं से व्यवस्थित तुलना की दरकार भी करता है। परिचयात्मक सिंहावलोकन के अभाव में ऐसा कोई अवसर यह पुस्तक पाठक को प्रदान नहीं कर पाती।

पुस्तक की एक और कमी गाँवों के बदलते सामाजिक परिवेश तथा चुनौतियों को नज़रअंदाज़ कर के मुख्यत: आर्थिक परिणति पर केंद्रित रहने की भी है। आज जब देहात पर भी विस्थापन, पारिवारिक बिखराव, बेरोज़गार युवाओं की बढ़ती कुण्ठा तथा कई राज्यों में बढ़ते जुर्म, नशा एवं साम्प्रदायिक तनाव के बादल छाने लगे हैं, तो इस सूरत में 'भारत के भविष्य' को गाँवों के आर्थिक विकास में ही ढूँढ़ने का प्रयास निश्चय ही आधा-अधूरा लगता है। यह ज़रूर कहा जा सकता है कि आठ सौ से ज़्यादा पन्नों के ग्रंथ में आर्थिक कठिनाइयों के साथ सामाजिक चुनौतियों पर भी समग्र विवरण देना मुश्किल था। परंतु ऐसी परिस्थिति में पुस्तक का शीर्षक बदलना शायद लाज़िमी था। इस के अतिरिक्त छोटे किसानों के ऋण तथा लागत जैसे कई ऐसे विषय हैं जिनकी पुस्तक में बारम्बार पुनरावृत्ति हुई है। ऐसे में सम्भव है कि उपलब्ध पृष्ठों में ही कुछ विवरणात्मक छँटाव द्वारा शीर्षक के अनुरूप गम्भीर सामाजिक तनावों पर भी एक अध्याय जोड़ा जा सकता। भावी संवर्धन में लेखक चाहें तो देहात में तेज़ी से उभर रही नयी आर्थिक गतिविधियों जैसे इंटरनेट, ग्रामीण बी.पी.ओ. एवं यातायात तथा उपभोक्ता वस्तुओं के बाज़ार इत्यादि पर कुछ और आँकड़े व अंतर्राज्यीय तुलनाएँ जोड़ सकते हैं।

विश्लेषण के स्तर पर भी लेखक के कुछ निष्कर्ष विवादास्पद नज़र आते हैं। इनमें किसानों की आत्महत्याओं की वजह तथा

एक निर्वाचित प्रतिनिधि ने अपने व्यापक भ्रमण व ज़मीनी अनुभवों का मौजूदा शोध-साहित्य से मिलान करने के बाद ही गाँवों की समस्याओं और उनके निदानों पर सटीक विवेचना प्रस्तुत की है। निश्चय ही अकादमिक अनुभव के अभाव में किसी के लिए भी स्थापित शोध में कुछ नया जोड़ पाना सरल नहीं है। परंतु 845 पृष्ठों, 248 तालिकाओं व 225 रेखा-चित्रों तथा सैकड़ों संदर्भ-ग्रंथों के उल्लेख से समृद्ध 'मेनिफ़ेस्टो' इस पेशेवर बंधन को लाँघने में काफ़ी हद तक सफल रहा है। इस सफलता का एक और कारण इस ग्रंथ की समग्रता भी है जिसके तहत लेखक ने आज के बहुचर्चित कृषि संकट के साथ-साथ गाँव के ग़ैर-कृषि उद्यमों की समस्याओं पर भी समुचित ध्यान दिया है।

12_devesh_varun:Layout 1 03-Oct-19 4:01 PM Page 220

'भारत के भविष्य' को गाँवों के आर्थिक विकास में ही ढूँढ़ने का प्रयास निश्चय ही आधा-अधूरा लगता है। यह ज़रूर कहा जा सकता है कि आठ सौ से ज़्यादा पन्नों के ग्रंथ में आर्थिक कठिनाइयों के साथ सामाजिक चुनौतियों पर भी समग्र विवरण देना मुश्किल था। परंतु ऐसी परिस्थिति में पुस्तक का शीर्षक बदलना शायद लाज़िमी था। इसके अतिरिक्त छोटे किसानों के ऋण तथा लागत जैसे कई ऐसे विषय हैं जिनकी पुस्तक में बार-बार पुनरावृत्ति हुई है।

बेरोज़गारी का निदान मुख्यत: गाँवों की आर्थिक स्थिति में ही तलाशना प्रमुख है। यहाँ उद्धरणीय है कि वरुण गाँधी ने प्रस्तुत शोध की शुरुआत क़र्ज़ के कारण आत्महत्या के कगार पर पहुँचे किसान परिवारों की स्थिति अपनी स्वयं की तनख़्वाह तथा सामूहिक-निधि के ज़रिये उबारने की कोशिश की विफलता को देख कर ही की थी।[1] इस प्रेरक परंतु विफल प्रयास के बाद भी लेखक द्वारा आत्महत्याओं को मुख्यत: आर्थिक क़िल्लत से उपजा मानना विचित्र लगता है। वास्तव में देश के समृद्ध राज्य जैसे तमिलनाडु एवं केरल प्रति लाख औसत 16 से अधिक आत्महत्याओं की घटनाएँ सालाना दर्ज करते हैं, जबकि पिछड़े प्रांत जैसे बिहार व झारखण्ड में यह आँकड़ा चार प्रति लाख से कम नज़र आया है।[2] यह स्पष्ट इशारा करता है कि किसानों की खुदकुशी की त्रासदी को सामाजिक और व्यक्तिगत तनाव जैसे पहलुओं से भी जोड़ कर देखने की आज आवश्यकता है। इसी तरह गाँवों के युवाओं में बढ़ती बेरोज़गारी को कृषि व ग्रामीण उद्यमों को बढ़ावा देकर ही नहीं बल्कि तीव्र शहरीकरण तथा उद्योगीकरण के ज़रिये भी तेज़ी से निरस्त करने की आवश्यकता है। जब किसानों के बेटे और बेटियाँ आज अन्य उद्योगीकृत राष्ट्रों की तर्ज़ पर स्वयं खेती छोड़ना चाहते हैं तब विश्लेषकों द्वारा छोटी किसानी पर ही अधिकतम बल देना और ज़मीन इत्यादि को ग़ैर-कृषि उद्यम के लिए परिवर्तित करने में क़ानूनी बाधाएँ उत्पन्न करना शायद आज के युवाओं की आकांक्षाओं को फलीभूत होने से रोकता है।

नीतिगत सुझाव तथा दृष्टियाँ समाज-शास्त्रियों में समान होंगे, यह अपेक्षा करना अनुचित होगा। इसी कारण गाँवों के चतुर्मुखी विकास की राह पर बहस आगे भी जारी रहेगी। परंतु यह निर्विवाद है कि हमारा विश्लेषण कभी भी हमारे राजनीतिक पूर्वाग्रहों से निर्दिष्ट न हो। सौभाग्य से वरुण गाँधी प्रस्तुत रचना में दक्षिणपंथी सोच से जुड़े होने के बावजूद अपने विश्लेषण को वस्तुनिष्ठ व समाधानपरक व्यावहारिक रूप दे पाए हैं। कृषि की उन्नति के लिए जहाँ वे सामूहिक खेती के वामपंथी कार्यक्रमों की आलोचना करते हैं तो प्रशासन से ज़्यादा बाज़ार के सहारे किसानों व निर्धनों को छोड़ने का भी स्पष्ट विरोध करते हैं। इसके अतिरिक्त वर्तमान सरकार से जुड़े होने बावजूद इसके हाल के कुछ कार्यक्रमों जैसे उज्ज्वला योजना एवं कौशल विकास योजना इत्यादि से भी उन्होंने असहमति प्रगट की है तथा गाँवों में ही गैस-सिलेंडर से कम क़ीमत पर उपलब्ध गोबर-गैस को बेहतर विकल्प माना है।[3]

---

[1] वरुण गाँधी से साक्षात्कार दिनांक 30 मई, 2019 को https://www.firstpost.com/india/a-rural-manifesto-far-removed-from-electoral-fire-and-fury-varun-gandhi-pens-book-on-agrarian-policies-5637431.html पर देखा.

[2] देखें : 'सुइसाइड्स इन इंडिया' 29 मई ,2019 को https://en.wikipedia.org/wiki/Suicide_in_India पर उपलब्ध.

[3] इस विषय पर लेखक के वैकल्पिक सोच से परिचय के लिए देखें, वरुण गाँधी (2019), *अ रूरल मेनिफ़ेस्टो,* रूपा, नयी दिल्ली : 422 तथा 470.

12_devesh_varun:Layout 1 03-Oct-19 4:01 PM Page 221

इन वैचारिक विवादों के अतिरिक्त कुछ अन्य त्रुटियाँ हैं जो ग्रंथ की मुख्य प्रस्तावना को प्रभावित नहीं करती व सरलता से दुरुस्त की जा सकती हैं। प्रथमतः कुछ तालिकाएँ हैं जो संबंधित अनुच्छेद से बेमेल नज़र आती हैं। (उदाहरण के लिए पृष्ठ 73 के अनुच्छेद 3 तथा चार्ट संख्या-27 में वर्ष 2012-13 के प्रति हेक्टेयर धान की खेती की औसत लागत के आँकड़ों में दोगुने से अधिक का अंतर है; ग्राफ़ संख्या-28 के सूचकांक के रंग अस्पष्ट होने के कारण रेखाओं के मायने निकालना असम्भव है; तथा पृष्ठ xix पर आत्मनिर्भर गाँवों की बीती संकल्पना को आज के विद्वानों में भी आम मानना तथ्यों के विरुद्ध है।[4] इसके अतिरिक्त पुस्तक के अंत में निर्दिष्ट ग्रंथों की सम्पूर्ण सूची देना भी बाक़ी है विशेषकर तब जब प्रस्तुत अध्यायों से संलग्न सभी ग्रंथ-सूचियाँ फ़िलहाल वर्णानुक्रम में नहीं हैं।

इन रिक्तताओं के बावजूद प्रस्तुत ग्रंथ ग्रामीण भारत पर विस्तृत जानकारी तथा समीक्षा का निश्चय ही उपयोगी संकलन है तथा भविष्य में इसका भारतीय भाषाओं में अनुवाद पाठकों के लिए बेहद लाभकारी होगा।

---

[4] भारत के गाँवों पर हुए शोध की ऐतिहासिक व्याख्या के लिए देखें, जॉन ब्रेमन तथा अश्वनी सेठ (1997), *विलेज इन एशिया रीविज़िटेड,* ऑक्सफ़र्ड युनिवर्सिटी प्रेस, नयी दिल्ली : 5-14.